**ओ३म्**

**‘मनुष्य के पतन का एक मुख्य कारण लोभ की प्रवृत्ति’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

काम, क्रोध, लोभ व मोह मनुष्य के प्रबल शत्रु हैं जो मनुष्य का जीवन नष्ट कर देते हैं। मनुष्य मदिरा के नशे की भांति जीवन में इनके वशीभूत रहता है। इनसे बचने का उपास केवल अविद्या का नाश है जिसके अनेक उपाय हैं, परन्तु बहुत से लोगों को इन उपायों का ज्ञान नहीं है। यह अविद्या रूपी शत्रु उन्हें अपने पाश व बन्धनों में जकड़ लेती है जिससे बहुत से मनुष्य इसके प्रभाव से अपना जीवन दुःखमय बना लेते हैं। इसी कारण महर्षि दयानन्द को आर्यसमाज के नियमों में प्रावधान करना पड़ा कि अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। पहला प्रश्न तो यह है कि मनुष्यों को पता होना चाहिये कि वह अविद्या से ग्रस्त हैं व उसे उन्हें छोड़ना हैं, तभी वह अपना सुधार कर सकेंगे। इसके लिए यह जानना आवश्यक है कि मनुष्य के जीवन पर उसके प्रारब्ध का भी प्रभाव रहता है। कुछ संस्कारी आत्मायें होती हैं जिनमें बुराईयां कम व अच्छाईयां अधिक होती हैं। कुछ आत्मायें ऐसी होती हैं जो अपने प्रारब्ध और इस जीवन के परिवेश के अनुसार सत गुणों की प्रधानता से युक्त ाहेती हैं और अधिकांश रज व तमों गुणों से युक्त होती हैं जिसका प्रभाव उनके स्वभाव, प्रकृति व व्यवहार आदि पर रहता है। इसे कोई सच्चा ज्ञानी ही जान सकता है व उसे दूर करने के उपाय बता सकता है।

 लोभ क्या है, लोभ लालच को कहते हैं। लालच का अर्थ है कि बिना उचित तरीकों के व धर्म, अधर्म, कर्तव्य, अकर्तव्य, उचित, अनुचित तथा आचार अनाचार का विचार किए अपनी इच्छित व पसन्द की वस्तुओं व पदार्थों को प्राप्त करने की अभिलाषा व इच्छा करना व उसमें अविवेकपूर्वक प्रवृत्त होना। लोभ के कारण समाज में अव्यवस्था फैलती है। यदि कोई व्यक्ति अवैध तरीकों से अनुचित आचरण से किसी वस्तु को प्राप्त करता है तो वह शासन के नियम के अनुसार अपराधी माना जाता है और ईश्वरीय नियमों में भी अपराधी होता है। हमारे समाज में नाना प्रकार के चोर होते हैं। वह लोभ की प्रवृत्ति व अपनी आदत के अनुसार अनुचित तरीकों से दूसरों का धन व सम्पत्तियों को हड़पने का कार्य करते हैं। कई बार प्रशासन के भ्रष्ट लोग भी उनके सहयोगी बन जाते हैं। उनका काम आसान हो जाता है और वह बुरे कामों में सफलता प्राप्त कर लेते हैं। लोकोक्ति है कि धन से मनुष्य की तृप्ति कभी नहीं होती। उसकी लोभ की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है और एक समय ऐसा आता है कि जब परिस्थितियां उनके प्रतिकूल हो जाती हैं और वह कानूनी शिंकजे में फंस जाता है। इससे उसका अपमान तो होता ही है, उसे नाना प्रकार के दुःख भी होते हैं। सद्ज्ञान प्राप्त न होने के कारण वह उससे बचने के उपाय तो करता है परन्तु उसे अपनी प्रवृत्ति बदलने की शिक्षा कहीं से नहीं मिलती। आजकल ऐसे बहुत से मामले प्रकाश में आ रहे हैं जब भ्रष्ट आचरण से कमाये कालाधन रखने वाले व गलत काम करने वाले कानून की गिरफ्त में आ रहे है और अपमानित व दुःखी हो रहे हैं। यह ईश्वर की व्यवस्था है कि **‘अवश्यमेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं’** अर्थात् शुभ व अशुभ कर्म करने वालों को अपने किये हुए कर्मों का फल भोगना ही पड़ता है। अपराध सार्वजनिक होने पर लोभी मनुष्य क्लेशित व दुःखी होता है तथा पछताता है। अतः मनुष्य को अपने मन व लोभ पर नियन्त्रण करना चाहिये। परन्तु इसका उपाय कहां से व किससे पता चल सकता है?

 इसका उपाय आर्यसमाज वा वैदिक साहित्य के स्वाध्याय से मिलता है। इसके साथ योगाभ्यास, सन्ध्या व पंचमहायज्ञों को करने वाले भी पाप व दुष्कर्मों सहित सभी प्रकार के मिथ्याचरणों से बच सकते हैं। लोभ एक प्रकार का आत्मा का वा आत्मा में विकार है। इसको आत्म ज्ञान, जिसे विद्या कह सकते हैं, उससे दूर किया जा सकता है। विद्या सच्चे वैदिक विद्वानों की शरण में जाकर उनके उपदेश व सत्संग से प्राप्त होती है। वेदों एवं वैदिक साहत्य सहित ऋषि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश आदि के अध्ययन व स्वाध्याय से भी अविद्या को दूर किया जा सकता है। योगाभ्यास, सन्ध्या आदि पंचमहायज्ञों से भी अविद्या को कम वा दूर किया जा सकता है। यह सब कुछ करने के बाद भी हो सकता है व प्रायः होता है कि लोभ ज्ञान के स्तर पर तो दूर हो जाये परन्तु आचरण से पूरी तरह दूर न हो। इसका उपाय यह है कि लोभ से होने वाली बड़ी बड़ी हानियों की सच्ची घटनाओं से सम्बन्धित साहित्य को ध्यान पूर्वक पढ़ा जाये व उसे पढ़ कर लोभ की प्रवृत्ति को छोड़ने का संकल्प लिया जाये। यदि संकल्प नहीं करेंगे तो लोभ की प्रवृत्ति कभी भी आक्रमण कर सकती है और मनुष्य से पाप व अधर्म करा सकती है। अतः लोभ की प्रवृत्ति से होनी वाली बड़ी बड़ी हानियों की घटनाओं पर ध्यान देना चाहिये और शुभ संकल्प धारण करने चाहिये। यह ध्यान रखना चाहिये कि एक शुभ संकल्प मनुष्य को बहुत आगे अर्थात् उन्नति की ओर ले जाता है। ऋषि दयानन्द ने सन् 1939 की शिवरात्रि को सच्चे शिव वा ईश्वर को जानने व उसे प्राप्त करने का संकल्प लिया था। इस संकल्प ने उन्हें विश्व का श्रेष्ठ व सर्वोत्तम धार्मिक विद्वान व विश्व गुरु बना दिया। यज्ञों में पशु हिंसा के विरोध का संकल्प लेने वाले महात्मा बुद्ध भी अपने समय में विश्व के पूज्य बने थे। हम स्वयं भी एक मित्र के द्वारा आर्यसमाज के सम्पर्क में आये और हमने ऋषि दयानन्द के जीवन चरितों सहित उनके प्रायः सभी ग्रन्थों का अध्ययन किया। इससे हमें अनेक अच्छे मित्र तो मिले ही साथ में हमारी अविद्या भी कम हुई। हमारे सेवाकाल में अनेक लोग हमारे सम्पर्क में आये। हमने देखा कि धर्म व वेदादि विषयों में उनका ज्ञान प्रायः शून्य होता है। सद् ग्रन्थों व सत्पुरुषों के संग का जो भी मनुष्य सेवन करेगा, वह अवश्य ही लाभान्वित होगा, उसकी लोभ की प्रवृत्ति पर भी अवश्य अंकुश लगेगा और वह अशुभ कर्मों से बच सकेगा।

 लोभ तो अवनति व पतन की ओर धकेलता ही है, इसके अतिरिक्त काम, क्रोध व मोह से भी मनुष्य का पतन होता है। हमें इन शत्रुओं को पहचानना चाहिये और इनसे मित्रता न कर शत्रुता ही करनी चाहये। यदि मित्रता करेंगे तो वर्तमान नहीं तो भविष्य में हानि अवश्य उठानी होगी। अतः इन व अन्य सभी शत्रुओं से बचने के लिए आर्यसमाज की शरण में जाकर हमें सत्यार्थ प्रकाश सहित ऋषि दयानन्द के सभी ग्रन्थों व इसके साथ वेद, दर्शन, उपनिषदों व समस्त वैदिक वांग्मय का अध्ययन करना चाहिये। विज्ञान ने आजकर यह सभी पुस्तकें हिन्दी भाषा में पुस्तक रूप में व इंटरनैट पर भी उपलब्ध करा दी हैं जिनका अध्ययन कर हम शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। इन ग्रन्थों की उपलब्धि व ज्ञान महर्षि दयानन्द से पूर्व देशवासियों को सुलभ नहीं था। वेद का आदेश है कि मनुष्य को मनुष्य बनने का प्रयास करना चाहिये **‘मनुर्भव’**। मनुष्य शुभ गुणों से युक्त मनुष्यों को ही कहते हैं। अशुभ गुणों वाले मनुष्य होकर भी मनुष्य नहीं कहे जा सकते। जिस प्रकार किसी पात्र में एक छिद्र हो जाये तो उसमें रखा जल सुरक्षित नहीं रहता, उसी प्रकार से यदि मनुष्य के जीवन में एक बुराई आ जाये तो वह जीवन मनुष्य जीवन न होकर पापयुक्त जीवन हो जाता है। अतः मनुष्य को पाप व अधर्म में प्रवृत्त करने वाले शत्रुओं लोभ, काम, क्रोध व मोह को जानकर इनसे अपनी रक्षा हेतु शुभ संकल्पों को धारण करना चाहिये। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘वेदों की रक्षा और आर्यसमाज’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 वेदर्षि दयानन्द (1825-1883) ने अपने अपूर्व पुरुषार्थ और वैदिक ज्ञान से वेदों का पुनरुद्धार किया था। वह सारे संसार को आर्य व वेदानुयायी बनाना चाहते थे परन्तु संसार के लोग उनकी जनहितकारी व लोक कल्याण की भावना को समझ नहीं पाये और उनसे असहयोग करते रहे। ऐसे ही लोगों ने षडयन्त्र रचे और महर्षि दयानन्द का जीवन विष देकर समाप्त कर दिया। महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज के तीसरे नियम में वेदों को सब सत्य विद्याओं का पुस्तक घोषित किया है और कहा है कि वेदों का पढ़ना व पढ़ाना तथा सुनना व सुनाना सब आर्यों, वेद और ऋषि दयानन्द के अनुयायियों का परम धर्म है। आज आर्यसमाज द्वारा वेदों के प्रचार प्रसार की क्या स्थिति है? हमें लगता है कि आज आर्यसमाज पहले की अपेक्षा सक्रिय कम निष्क्रिय अधिक हुआ है। स्वामी अमर स्वामी जी ने एक बार कहा था कि पहले के आर्यसमाज के मन्दिर कच्चे होते थे परन्तु आर्यसमाजी बड़े पक्के होते थे। अब आर्यसमाज के भवन तो पक्के बन गये हैं परन्तु आर्यसमाजी कच्चे हो गये हैं। इस बात में हमें काफी सीमा तक सत्य दिखाई देता है। आज आर्यसमाज के परिवारों के बच्चे अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ते हैं। रात दिन पढ़ाई करनी होती है। शिक्षा पूरी करने के बाद अधिकांश लोग सरकारी व अपने अपने व्यवसाय में लग जाते हैं और पश्चिमी विचारों, आचार विचार, रहन सहन व जीवन पद्धति को अपना लेते हैं व अपना रहे हैं। माता-पिता का उन पर वश नहीं होता। वह सब अपनी मर्जी के मालिक होते हैं। इससे लगता है कि वह व उनकी भावी पीढ़ियां पश्चिमी विचारों की पोषक ही बनेंगी और आर्यसमाज के सन्ध्या, यज्ञ आदि पंचमहायज्ञों से ही वह दूर नहीं जायेंगी अपितु सत्यार्थप्रकाश और वेद से भी दूर हो जायेगीं।

 दूसरी ओर हमारे गुरुकुल हैं। गुरुकुलों में भी हम देखते हैं कि लोग किन्हीं कारणों से गुरुकुल में पढ़ते हैं और फिर डिग्रियां लेकर महाविद्यालयों में अध्यापन आदि विषयक सरकारी व अच्छे वेतन की नौकरी की तलाश करते हैं। नौकरी व इच्छित रोजगार मिल जाने पर वह अपने व्यवसाय व गृहस्थ जीवन में लिप्त हो जाते हैं। आर्यसमाज का काम उनसे नहीं हो पाता। यहां यह बता दें कि आर्यसमाज में डा. धर्मवीर जी, डा. रघुवीर जी, डा. सोमदेव शास्त्री, डा. महेश विद्यालंकार आदि गुरुकुलों के ही स्नातक थे। आपने शिक्षा जगत में अच्छा कार्य किया और साथ ही आर्यसमाज को भी पर्याप्त समय व सेवायें दी जिन पर प्रत्येक आर्यसमाजी को गर्व है। गुरुकुल के जिन स्नातकों को अच्छा रोजगार नहीं मिलता वह कुछ लोग आर्यसमाजों में पुरोहित बन जाते हैं। विद्वान पुरोहितों का भी आर्यसमाज के अधिकारी कई प्रकार से शोषण करते हैं। वेतन उन्हें नाम मात्र ही मिलता है। उनकी आवश्यकतायें अधिक होती हैं। अतः वह भी पूरे मन से आर्यसमाज का प्रचार नहीं कर पाते। हमें यदा कदा दक्षिणा को लेकर कुछ पुरोहितों की शिकायतें भी सुनने को मिलती हैं। एक पुरोहित जी ने एक बार हमारे मित्र के पुत्र का विवाह संस्कार कराया। उन्होंने उन्हें अपनी इच्छानुसार दक्षिणा दी। पुरोहित जी हमसे पूछने लगे कि बैण्ड, आरकेस्ट्रा और अन्य अन्य को क्या दक्षिणा दी गई। क्या उन्होंने विवाह कराया? हमें उनसे कम दक्षिणा क्यों दी गई? उसके बाद वह वर के पिता के पास गये और उन्हें कुछ कहा। हमने देखा कि वर के पिता ने अपना बटुआ खोला और कुछ दक्षिणा और लेकर पुरोहित जी विदा हो गये। हम यहां पुरोहित जी को दोष नहीं दे रहे हैं परन्तु अनेक स्थितियों में पुरोहितों को उचित दक्षिणा नहीं मिलती। इसके हमारे सामने अनेक उदाहरण हैं। होना तो यह चाहिये कि गुरुकुलों के सभी स्नातक युवक आर्यसमाज के प्रचारक बनते परन्तु ऐसा हो नहीं पा रहा है। आर्यसमाज के अधिकारी भी गुरुकुलों के स्नातकों की सेवायें लेने के लिए उत्सुक नहीं दिखाई देते। अतः स्नातकों को अपनी आजीविका व गृहस्थ जीवन के लिए उपाय तो करने ही होते हैं।

 आजकल देश में आतंकवाद का खतरा भी निरन्तर वृद्धि को प्राप्त हो रहा है। हम केवल अपने सैनिकों के बल पर ही अपने घर में सुख की श्वांस ले रहे हैं। हमारी स्थिति **‘सुरक्षा हटी दुर्घटना घटी’** वाली है। भविष्य में क्या होगा, यह कोई नहीं जानता परन्तु जिस प्रकार से आतंकवादी हिंसा बढ़ रही और उनका जो उद्देश्य है उससे वैदिक धर्मी और वेद तो असुरक्षित होंगे ही। अभी धुलागढ़ व मालदा आदि में जो हुआ वह भी देखने व सुनने को मिला है। इतिहास में मीनाक्षीपुरम् और केरल के मोपला विद्रोह की घटनायें भी आर्यों को स्मरण हैं। यह सब हमारे लिए खतरे की घंटी हैं। पहले वेद विलुप्त हो गये थे तो महर्षि दयानन्द ने उनका पुनरुद्धार किया। ऋषि के अनुयायियों की पहली व उसके बाद की कुछ पीढ़ियों व विद्वानों ने वेदों को सुरक्षित करने का सफल प्रयास किया। आज तो वेदों की स्थिति यह है कि मन्त्र संहितायें तो प्राय: छपती ही नहीं है। वेद भाष्य जो प्रकाशित होते हैं वह भी पांच सौ या एक हजार की संख्या में प्रकाशित होते हैं और वह भी दशकों तक बिकते नहीं हैं। इससे अनुमान लगा सकते हैं कि कितना वेद प्रचार हो रहा है और वेद कितने सुरक्षित हैं। जहां तक पौराणिक सनातनी बन्धुओं की बात है उन्होंने वेदों का अध्ययन और यहां तक कि वेदों का नाम लेना भी छोड़ ही रखा है। वह रामचरित मानस, गीता या पुराणों तक ही सीमित हैं। आज जितने धर्मगुरु टीवी आदि पर दिखाई देते हैं, वह भी पुराणों की कथा करके ही अपना इष्ट सिद्ध करते हैं। अतः वेदों की रक्षा पर गम्भीर विचार की आवश्यकता है। क्या आज वेद सुरक्षित हैं और भविष्य में भी रहेंगे? यह विलुप्त नहीं होंगे, क्या ऐसा मान सकते हैं। हमें इसका उत्तर यही मिलता है कि शायद कोई चमत्कार हो जाये, कोई ऋषि दयानन्द के समान ऋषि आ जाये तो सुधार हो सकता है अन्यथा अब संसार तो नास्तिकता की ओर ही बढ़ रहा है। संसार में आस्तिकों की संख्या निरन्तर घटती ही जा रही है। आर्यसमाज में भी आज स्वाध्याय की प्रवृति काफी घटी है। सन्ध्या व हवन की ओर भी आर्यों का उतना ध्यान नहीं है जितना होना चाहिये। देश की बहुत कम आर्यसमाजों में दो समय का दैनिक यज्ञ होता होगा? अतः वेदों की रक्षा पर विद्वानों द्वारा विचार किया जाना आवश्यक एवं समीचीन प्रतीत होता है।

 स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कांगड़ी में जो गुरुकुल खोला था वह भी अब पूर्णतः आर्यसमाज के नियंत्रण में न होकर एक सरकारी यूनिवर्सिटी बन गया है। अब वहां अन्य अन्य विषयों का अधिक अध्ययन होता है जिसका आर्यसमाज के प्रचार व प्रसार से कोई लेना देना नहीं है। वहां गुरुकुल से कितने स्नातक बनते हैं और उनमें से कोई आर्यसमाज का प्रचारक बनता है या नहीं, इसकी कोई जानकारी नहीं है। अनुमान यही है कि गुरुकुल कांगड़ी से आर्ष शिक्षा प्रणाली के स्नातक नहीं निकलते। यदि निकलते हों तो शायद् किसी को कोई ज्ञान नहीं है। ऐसी ही स्थिति कम व अधिक सभी गुरुकुलों की हो सकती है। हमने कैप्टेन देवरत्न आर्य जी के पिता आचार्य भद्रसेन जी के जीवन में पढ़ा है कि उन्होंने जानबूझकर शिक्षा की सरकारी डिग्रीयां इस लिए प्राप्त नहीं की थीं कि उनमें मन में सरकारी नौकरी का लालच न आ जाये जबकि वह अपनी योग्यता से वेदों पर अनुसंधान व शोध करने वालों को भी परामर्श देते थे। हमने अनुभव किया कि उनका जीवन भी अभावों की भट्टी में होकर गुजरा था। सौभाग्य से उन्हें देवरत्न आर्य जैसे योग्य व श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त हुए थे जिन्होंने अपने माता-पिता की सेवा के साथ अपने सभी भाई-बहिनों से अच्छे व मधुर सम्बन्ध बनाये और आर्यसमाज की भी उल्लेखनीय सेवा की। आज आर्यसमाज को ऐसे गुरुकुलों की आवश्यकता है जहां ब्रह्मचारियों को डिग्रियां न देकर वैदिक धर्म का प्रचारक बनाया जाये जैसा कि रोजड़ आदि गुरुकुलों में होता है। इसके लिए स्वामी सत्यपति जी सहित उनके शिष्य ज्ञानेश्वर जी व स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक जी आदि बधाई के पात्र हैं।

 वेदेां की रक्षा कैसे की जा सकती है? इसका समुचित समाधान हमें मिल नहीं रहा है। हम आर्यसमाज के बड़े विद्वानों व संन्यासियों को इसका उत्तर तलाश करने की अपील करते हैं। वह अपने अनुभवों से आर्यजगत का मार्ग दर्शन करें, यह हमारी प्रार्थना है। इसी के साथ लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘शीर्ष वैदिक विद्वान डा. रघुवीर वेदालंकार और**

**उनकी पुस्तक ‘ध्यान तथा उपासना’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

डा. रघुवीर वेदालंकार जी की एक कृति **‘ध्यान तथा उपासना’** है जिसका प्रकाशन सत्यधर्म प्रकाशन, रोहतक से सन् 1906 में हुआ था। हमने अप्रैल सन् 2007 में गुवाहटी की यात्रा की थी और वहां अपनी पुत्री के पास कुछ दिन रहे थे। उसी बीच रेलयात्रा और गुवाहटी प्रवास में हमने इस पुस्तक को पढ़ा था। यह पुस्तक हमें अपने विषय की एक महत्वपूर्ण एवं उपासना में मार्गदर्शन देने वाली अच्छी पुस्तक लगी थी। इसके बाद जब हम डा. रघुवीर जी से मिले थे तो हमें याद है कि हमने इसकी प्रशंसा की थी। स्वाध्यायशील जिन बन्धुओं ने इस पुस्तक का अध्ययन न किया हो, उनको हमारा परामर्श है कि उन्हें एक बार इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। आज हम इस पुस्तक से ध्यान करने की विधि का एक संक्षिप्त उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। हम आशा करते हैं कि पाठकों को यह उद्धरण उपादेय लगेगा।

**“उपासक जिसकी उपासना करने चला है, उसके स्वरूप का ध्यान उपासक को होना चाहिए। परमेश्वर के स्वरूप को पूर्ण रूप से तो हम नहीं जान सकते तथापि उसके कुछ गुणों को हृदयंगम करके ध्यान में प्रवेश करें। यथा परमेश्वर सर्वरक्षक, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, दयालु, सर्वान्तर्यामी, आनन्द-स्वरूप है। ये गुण केवल वाचिक रूप में ही स्मरण नहीं रहने चाहिएं, अपितु ध्यान में बैठकर इन गुणों का चिन्तन एवं अनुभव करना चाहिये। उस समय आपकी यह स्थिति हो कि आपको लगे कि परमेश्वर मेरे ऊपर-नीचे, अन्दर-बाहर सर्वत्र विद्यमान है। मैं इस सर्वव्यापक आनन्दस्वरूप परमेश्वर की गोदी में उसी प्रकार बैठा हुआ हूं जैसे नदी में कोई तैराक लेटा या बैठा रहता है। नदी के मध्य लेटने पर निश्चित रूप से शीतलता की प्रतीति होगी। इसी प्रकार प्रभु की उपासना मे बैठ कर उापको ऐसा लगना चाहिए, ऐसा अनुभव होना चाहिए कि मैं आनन्द स्वरूप परमेश्वर के मध्य बैठा हूं तथा उसका आनन्द शनैः-शनैः मेरे अन्दर समाहित होता जा रहा है। यह स्थिति एक ही दिन में उत्पन्न नहीं होगी। इसमें समय लगेगा। अतः धैर्य पूर्वक साधना का क्रम जारी रखिए। कुछ काल पश्चात् यह अनुभूति आपको होने लगेगी।”**

 वैदिक विद्वान डा. रघुवीर वेदालंकार जी का जन्म जिला मुजफरनगर, उत्तर प्रदेश में सन् 1945 में हुआ था। आपकी शिक्षा गुरुकुल झज्जर एवं गुरुकुल कांड़ी विश्वविद्यालय में हुई। आपने वेदालंकार, व्याकरणाचार्य, वेदाचार्य, एम.ए., पी.-एच.डी., काव्यतीर्थ (लब्धसुवर्णपदक) प्राप्त की हैं। आपने 30 वर्षों से अधिक अवधि तक अध्यापन किया। आप रामजस कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के उपाचर्य रहे। आपने दिल्ली में वेद मन्दिर, रोहिणी की स्थापना भी की तथा प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, दिल्ली के संस्थापक अध्यक्ष हैं। सन् 2006 तक आप 14 पुस्तकों का लेखन तथा 4 पुस्तकों का सम्पादन कर चुके थे। इसके बाद भी आपने कुछ पुस्तकों का लेखन एवं सम्पादन किया है। आपकी कुछ पुस्तकें वेदों का तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन (सम्पादन), उपनिषदों में योग विद्या (पुरस्कृत), काशिका का समालोचनात्मक अध्ययन (पुरस्कृत), काशिका हिन्दी व्याख्या (पुरस्कृत), क्या अथर्ववेद में जादू टोना है?, वैदिक दर्शन, वैदिक संस्कृति एवं आर्यसमाज, वैदिक चिन्तन (सम्पादित), मन की अद्भुत शक्तियां एवं स्वरूप, वेदों में क्या है?, अथर्ववेद में क्या है? तथा पातंजल योगदर्शन का अध्ययन आदि हैं। इस वर्ष आपकी एक पुस्तक **‘दीर्घजीवन तथा आयुवृद्धि’** (एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण) का प्रकाशन आचार्य प्रणवानन्द विश्वनीड़ न्यास, देहरादून की ओर हुआ है। हमारे पास आपकी एक पुस्तक ज्ञान का प्रादुर्भाव भी है। आप उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ, आर्यसमाज बड़ा बाजार, पानीपत, रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ तथा आर्यसमाज सरस्वती विवहार दिल्ली द्वारा भी आदृत हैं। **‘वेदों के नामपद एवं आख्यान’** आपका डी.लिट्. उपाधि के लिए शोधग्रन्थ है। हमने आपके अनेक व्याख्यान सुने हैं। आप बहुत वैदिक विषयों पर सरल व सुबोध भाषा में सामयिक विषयों का समावेश कर प्रभावशाली व्याख्यान देते हैं। आर्यसमाज को भी आप झकझोरते रहते हैं। अभी कुछ दिन पूर्व ही हमने परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा 4 नवम्बर, 2016 को सम्पन्न **‘राष्ट्र रक्षा सम्मेलन’** में आपका ओजस्वी व्याख्यान प्रसारित किया है।

 आप आर्यसमाज के शीर्षस्थ विद्वान है। हम आर्यसमाज के सभी अधिकारी महानुभाव व विद्वानों से निवेदन करेंगे कि जहां जहां आपके प्रवचन हों उसकी मोबाइल व कैमरों की सहायता से वीडियों चलचित्र बनाकर उसे यूट्यूब आदि के माध्यम से प्रसारित करें। उनके सभी वीडियों चलचित्रों का संग्रह आर्यसमाज के लिए भविष्य में उपयोगी हो सकता है। लेख को विराम देते हुए हम डा. रघुवीर वेदालंकार जी के स्वस्थ एवं सुदीर्घ जीवन की ईश्वर से कामना करते हैं। आ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**